

सावल दास

बनाम

बिहार राज्य

9 जनवरी, 1974

[एम. एच. बेग और पी. एन. भगवती, न्यायमूर्तिगण]

भारतीय दंड संहिता (1860 का अधिनियम 45), धारा 34 और 302—परिस्थितिजन्य साक्ष्य—अभियुक्त पर धारा 302/34 के तहत आरोप—जब अन्य को धारा 302/34 के तहत बरी कर दिया जाता है, तब अभियुक्त को धारा 302 के तहत कब दोषी ठहराया जा सकता है—धारा 201 के तहत अपराध—दंडादेश।

साक्ष्य अधिनियम (1872 का 1), धारा 103 और 106—व्याप्ति।

अपीलकर्ता मृतक का पति है। मामले में साक्ष्य ने यह स्थापित किया कि मृतक और उसकी सास के बीच संबंध बहुत तनावपूर्ण थे; कि, हत्या की सुबह उनके बीच झगड़े के बाद अपीलकर्ता अपनी पत्नी, मृतक के साथ एक कमरे में गया, जिसके पीछे उसके पिता और माँ भी गए; कि, उसके तुरंत बाद, मृतक महिला की उसे मारे जाने से बचाने की चीखें सुनी गईं; और यह कि, थोड़ी देर बाद, अपीलकर्ता और उसके पिता मृतक के शव को ले गए और शहर में रह रहे मृतक के रिश्तेदारों को सूचित किए बिना और कोई भी अंतिम संस्कार किए बिना श्मशान घाट पर जलाकर उसका निस्तारण कर दिया।

इस साक्ष्य पर, अपीलकर्ता के इस तर्क को खारिज करते हुए कि मृतक की मृत्यु आग से लगी चोटों के कारण दुर्घटनावश हुई थी, विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता, उसके पिता और माँ को भा.द.सं. की धारा 302/34 के तहत अपराधों के लिए दोषी ठहराया। विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता और उसके पिता को भा.द.सं. की धारा 201 के तहत भी दोषी ठहराया। अपील पर, उच्च न्यायालय ने उन्हें धारा 302/34 भा.द.सं. के तहत अपराध से बरी कर दिया, लेकिन अकेले अपीलकर्ता को धारा 302 भा.द.सं. के तहत अपराध का

दोषी पाया। उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता और उसके पिता को धारा 201 भा.द.सं. के तहत भी दोषी पाया और पिता के विरुद्ध तीन वर्ष के कारावास का दंडादेश पारित किया। धारा 302 के तहत आजीवन कारावास के दंडादेश को देखते हुए अपीलकर्ता पर कोई अलग दंडादेश पारित नहीं किया गया।

इस न्यायालय में अपील करने पर,

अभिनिर्धारित : (1) जलने से मृत्यु के संबंध में साक्ष्य में अधिकतर अफवाहें और विश्वास शामिल थे। यह स्पष्ट रूप से अनुश्रुत साक्ष्य था और अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा इसे सही रूप से अपवर्जित कर दिया गया था।

(2) साक्ष्य अधिनियम की धारा 103 और 106 के तहत, अभियुक्त द्वारा विशेष रूप से लिए गए ऐसे बचाव को साबित करने का भार, जो उसे आपराधिक दायित्व से मुक्त कर सकता है, उसी पर होता है; यद्यपि, उस साक्ष्य की मात्रा जिसके द्वारा वह इस भार का निर्वहन करने में सफल हो सकता है, अभियोजन पक्ष पर अभियुक्त के अपराध को उचित संदेह से परे स्थापित करने के भार से कम हो सकती है। सबसे अच्छा साक्ष्य एक डॉक्टर का हो सकता था जिसे अपीलकर्ता अपने फोन पर बुला सकता था, लेकिन किसी डॉक्टर को नहीं बुलाया गया। [79 बी]

(3) लेकिन, साक्ष्य अधिनियम की धारा 103 या 106 का लागू होना, अभियोजन पक्ष को उचित संदेह से परे अभियोजन मामले को साबित करने के अपने सामान्य या प्राथमिक भार के निर्वहन के कर्तव्य से मुक्त नहीं कर सकता। केवल तभी जब अभियोजन पक्ष ने ऐसा साक्ष्य प्रस्तुत किया हो, जिस पर यदि विश्वास किया जाए, तो वह दोषसिद्धि का आधार बनेगा, या जो प्रथम दृष्ट्या मामला बनाता है, तभी उन तथ्यों पर विचार करने का प्रश्न उठता है जिनका सिद्ध करने का भार अभियुक्त पर हो सकता है। [79 डी]

(4) वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता के पिता और माता को धारा 302/34 भा.द.सं. के तहत हत्या के लिए बरी किए जाने के बाद, अपीलकर्ता को केवल धारा 302 भा.द.सं. के

तहत दोषी ठहराए जाने से पहले अभियोजन पक्ष द्वारा उसके व्यक्तिगत दायित्व को स्थापित किया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में ऐसा कुछ भी नहीं है जो अपीलकर्ता के किसी विशेष या अलग कार्य के लिए दायित्व को निश्चित या निर्णायक रूप से तय कर सके जिसे उसकी पत्नी की मृत्यु का कारण कहा जा सके। [79 एच]

के. जी. पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य, [1964] 1 एस.सी.आर. 678, सोहन लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1971] 1 एस.सी.सी. 498 और यशवंत एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, [1973] 1 एस.सी.आर. 291, का अनुसरण किया गया।

(5) इसके अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष ने एक महत्वपूर्ण साक्षी, अर्थात् नौकरानी का परीक्षण नहीं किया है, जो घटना के समय बरामदे में थी। उसका साक्ष्य अभियोजन पक्ष के मामले को उजागर करने के लिए आवश्यक था और इसलिए, अभियोजन पक्ष को उसका साक्ष्य नहीं रोकना चाहिए था, चाहे उसका मामले पर जो भी प्रभाव पड़े। अपीलकर्ता, इसलिए, न्यायालय से साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 दृष्टांत (जी) के तहत वैकल्पिक उपधारणा का लाभ देने और यह अनिचली लगाने के लिए कह सकता था कि, यदि उसे पेश किया गया होता, तो उसका साक्ष्य अपीलकर्ता के विरुद्ध अभियोजन मामले को नुकसान पहुँचाता। दं.प्र.सं. की धारा 164 के तहत उसका कथन केवल उसकी पुष्टि करने या उसका खंडन करने के लिए साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जा सकता था यदि वह विचारण में साक्षी के रूप में उपस्थित होती, और अभियोजन पक्ष द्वारा उस पर भरोसा नहीं किया जा सकता था। [80 जी, एच]

स्टीफन स्नेविरत्रे बनाम द किंग, ए.आई.आर. 1936 पी. सी. 289, 300, संदर्भित।

(6) इसलिए, यद्यपि यह माना जाना चाहिए कि मृतक की हत्या की गई थी, यह निर्णायक रूप से पता लगाना संभव नहीं था कि वह व्यक्ति जिसने गला घोंटा होगा या कोई अन्य कार्य किया होगा जिससे वास्तव में मृतक की मृत्यु हुई, वह अपीलकर्ता था न कि उसके पिता या माता।

(7) जहाँ तक अपीलकर्ता द्वारा शव के निस्तारण के मामले का संबंध है, परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर सही रूप से विश्वास किया गया और दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा इसे निर्णायक माना गया। [82 जी]

(8) दंडादेश के संबंध में, अपीलकर्ता उस अधिकतम दंडादेश का हकदार है जो धारा 201 भा.द.सं. के तहत लगाया जा सकता है। दंडादेश के संबंध में अपीलकर्ता और उसके पिता के मामले के बीच अंतर न्यायसंगत है क्योंकि; (क) एक पति के रूप में अपीलकर्ता का यह कर्तव्य था कि उसने अपनी पत्नी की रक्षा के लिए कुछ किया होता, भले ही तर्क के लिए यह मान लिया जाए कि वास्तविक मृत्यु दूसरों के कृत्यों द्वारा हुई हो सकती है, और (ख) अपीलकर्ता ने मृतक महिला के शव के निस्तारण में अग्रणी भूमिका निभाई थी। [83 बी]

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 1972 की आपराधिक अपील संख्या 70

1968 की आपराधिक अपील संख्या 90 में पटना उच्च न्यायालय के 16 सितंबर, 1971 के निर्णय और आदेश से विशेष अनुमति द्वारा अपील।

अपीलकर्ता के लिए *ए. एन. मुल्ला, एस. एन. मिश्रा, एस. एस. जौहर और सुधा मिश्रा।*

उत्तरदाता के लिए *आर. सी. प्रसाद।*

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

बेग, न्यायमूर्ति- हमारे समक्ष विशेष अनुमति प्राप्त अपीलकर्ता, सावल दास, उसके पिता जमुना प्रसाद, और उसकी सौतेली माँ कलावती देवी पर बिहार के मुजफ्फरपुर के मोहल्ला अंडी गोला में उनके घर में 28-5-1965 को अपीलकर्ता की पत्नी श्रीमती चंदा देवी की जानबूझकर हत्या करने के आरोप में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के तहत अपराधों का आरोप लगाया गया था। अपीलकर्ता सावल दास, उसके पिता जमुना प्रसाद, उनके मोटर चालक सीता राम, और आठ अन्य व्यक्तियों पर हत्या को छिपाने के उद्देश्य से श्रीमती चंदा देवी के शव को गायब करने के लिए भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के

तहत आरोप लगाया गया था। इसके अतिरिक्त, श्रीमती कलावती देवी पर चंदा देवी की हत्या के लिए उकसाने के लिए भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302/109 के तहत आरोप लगाया गया था। विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता और जमुना प्रसाद और कलावती देवी के विरुद्ध आरोपों को संशोधित कर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302/34 में परिवर्तित कर दिया था और उनमें से प्रत्येक को हत्या के अपराध के लिए धारा 34 भा.द.सं. की सहायता से दोषी ठहराया और उन्हें आजीवन कारावास की सजा सुनाई। इसने अपीलकर्ता और उसके पिता को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के तहत भी दोषी ठहराया था, लेकिन इसने इस अपराध के लिए उनके विरुद्ध अलग से दंडादेश पारित नहीं किया। चालक सीता राम को भी भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के तहत दोषी ठहराया गया और तीन वर्ष के सश्रम कारावास की सजा सुनाई गई। इसने अन्य सभी अभियुक्त व्यक्तियों को बरी कर दिया। अपील पर, पटना उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता, उसके पिता और उसकी सौतेली माँ को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के तहत दंडनीय अपराधों से बरी कर दिया था, लेकिन इसने अकेले अपीलकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध का दोषी पाया और उसे आजीवन कारावास की सजा सुनाई। इसने अपीलकर्ता और उसके पिता को भारतीय दंड संहिता की धारा 201 के तहत भी दोषी पाया था, लेकिन, जमुना प्रसाद पर तीन वर्ष के सश्रम कारावास का दंडादेश पारित करते हुए, इसने धारा 302 भारतीय दंड संहिता के तहत उसकी दोषसिद्धि को देखते हुए अपीलकर्ता पर अलग से दंडादेश पारित नहीं किया था। इसने कलावती देवी और सीता राम की अपीलों को स्वीकार कर लिया और उन्हें बरी कर दिया।

अपीलकर्ता के विरुद्ध पूरा मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर निर्भर है। उस हत्या का कोई चश्मदीद साक्षी नहीं है जिसे 28-5-1965 की सुबह लगभग 8.00 बजे अपीलकर्ता, उसके पिता और सौतेली माँ द्वारा संयुक्त रूप से किया गया आरोप लगाया गया था। सत्र न्यायाधीश ने तीन अभियुक्त व्यक्तियों को धारा 302/34 भारतीय दंड संहिता के तहत हत्या का दोषी ठहराने के लिए निम्नलिखित सिद्ध तथ्यों और परिस्थितियों पर भरोसा किया था:

1. श्रीमती चंदा देवी और उनकी सौतेली सास, श्रीमती कलावती देवी, जो अपने-अपने पति और बच्चों के साथ एक ही घर में रह रही थीं, के बीच संबंध तनावपूर्ण थे जिससे उनके बीच अक्सर झगड़े होते थे।

2. अपीलकर्ता और उसके पिता जमुना प्रसाद मृतक पत्नी और उसकी सास के बीच झगड़ों में श्रीमती कलावती का पक्ष लेते थे।

3. हत्या की सुबह, मृतक और श्रीमती कलावती के बीच विशेष रूप से तीखा झगड़ा हुआ था जिससे श्रीमती कलावती, जो घर की पहली मंजिल पर श्रीमती चंदा देवी के कमरे के बगल वाले कमरे में रह रही थीं, ने अपीलकर्ता को पुकारा कि उसकी "बदमाश पत्नी" उससे झगड़ा कर रही है और उसे तथा जमुना को सूचित किया कि अब से घर में या तो वह रहेगी या चंदा देवी।

4. अपीलकर्ता और उसके पिता जमुना प्रसाद ऊपर बरामदे में गए जहाँ झगड़ा हो रहा था और अपीलकर्ता चंदा देवी को उसके कमरे के अंदर ले गया या धक्का दिया, जिसके पीछे अपीलकर्ता के पिता और उसकी सौतेली माँ भी गए।

5. उसके तुरंत बाद, कमरे के अंदर से कम से कम "बचाओ" "बचाओ" की चीखें सुनी गईं। उसके बाद किसी ने श्रीमती चंदा देवी की आवाज नहीं सुनी।

6. इन चीखों के तुरंत बाद, चंदा देवी के बच्चों को रोते हुए और ऐसे शब्द बोलते हुए सुना गया जो संकेत देते थे कि उनकी माँ या तो मारी जा रही थी या मारी जा चुकी थी।

7. उसके थोड़ी देर बाद, अपीलकर्ता और उसके पिता जमुना प्रसाद को उनके चालक सीता राम और एक अन्य व्यक्ति की मदद से एक बोरी लाते हुए और उसे कार की डिक्की में रखते हुए देखा गया, जिसे चालक वहाँ लेकर आया था।

8. मृतक चंदा देवी के शव वाली कार को तेजी से चलाया गया और 50 मील दूर, जिसे पहलेजा-घाट के नाम से जाना जाता है, रात में वहाँ जलाने के लिए ले जाया गया। कार को रात 9.00 बजे सोनपुर पुल पार करते हुए दिखाया गया था।

9. शहर में रह रहे मृतक श्रीमती चंदा देवी के रिश्तेदारों को अपीलकर्ता या उसके परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा बिल्कुल भी सूचित नहीं किया गया था कि उसकी मृत्यु प्राकृतिक या दुर्घटनावश हुई है।

10. परिवार में सामान्यतः अंतिम संस्कार करने वाले किसी भी व्यक्ति को सूचित नहीं किया गया था और सामान्य प्रकार की कोई शव यात्रा नहीं निकाली गई थी। लेकिन, अपीलकर्ता के कुछ रिश्तेदार, जो शव के अवैध निस्तारण के अपराध के लिए सह-अभियुक्त थे, एक ट्रक में पीछे जाते हुए बताए गए थे।

11. कुछ खून, जिसके बारे में कहा गया था कि वह इतना विघटित हो गया था कि उसके मूल का निर्धारण नहीं किया जा सका, कार की डिक्की के साथ-साथ कार के अंदर से खुरच कर निकाला गया दिखाया गया था।

विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा था कि, ऊपर सूचीबद्ध स्थापित परिस्थितियों के आधार पर, न्यायालय के पास कोई अन्य निष्कर्ष खुला नहीं था सिवाय इसके कि अपीलकर्ता और उसके पिता और सौतेली माँ ने संयुक्त रूप से 28-5-1965 की सुबह मृतक श्रीमती चंदा देवी की हत्या की थी और अपीलकर्ता और उसके पिता ने तब अपराध किए जाने को छिपाने के लिए जल्दबाजी और चोरी-छिपे शव का निस्तारण कर दिया था। इसने इस निष्कर्ष पर पहुँचने में इस तथ्य को भी ध्यान में रखा था कि अपीलकर्ता ने अपने लिखित कथन में असफल रूप से एक बचाव पक्ष रखा था कि श्रीमती चंदा देवी, जिनके बारे में उसके द्वारा नायलॉन की साड़ी पहनने का आरोप लगाया गया था, अपने कमरे में मिट्टी के तेल के स्टोव का उपयोग करते समय दुर्घटनावश आग लग जाने से उनके शरीर पर व्यापक रूप से जलने के कारण उनकी मृत्यु हो गई और वे गिर गईं। अपीलकर्ता ने आरोप लगाया था कि श्रीमती चंदा देवी बार-बार गर्भधारण के कारण कमजोर थीं और उनका स्वास्थ्य खराब रहता था और वे अस्थमा, कमजोर हृदय और पेट की शिकायतों से भी पीड़ित थीं। उन्होंने छह बच्चों को जन्म दिया था।

विचारण न्यायालय ने टिप्पणी की कि अपीलकर्ता के बचाव की पुष्टि के लिए किसी डॉक्टर को नहीं बुलाया गया था। इसके अलावा, इसने इंगित किया कि, जैसा कि एक उच्च योग्य डॉक्टर, डॉ. जी. बी. सहाय ने गवाही दी थी, सामान्यतः अपीलकर्ता द्वारा लगाए गए आरोप के प्रकार के आकस्मिक रूप से जलने के परिणामस्वरूप तुरंत मृत्यु नहीं होगी और ऐसी स्थिति में खुद को बचाने के प्रयासों में जमीन पर लोटने या मृतक के अन्य कार्यों के साक्ष्य होते। विचारण न्यायालय ने चंदा देवी के रिश्तेदारों के इस साक्ष्य पर भी विश्वास किया था कि उनका स्वास्थ्य अच्छा था जिससे अपीलकर्ता के इस दावे को स्वीकार नहीं किया जा सकता था कि उनका हृदय कमजोर था। इसने यह भी देखा कि जिस कमरे में श्रीमती चंदा देवी की मृत्यु होना स्वीकार किया गया था, उसकी दीवारों या छत पर कपड़े के जले हुए टुकड़े या धुँ या कालिख के निशान मौजूद नहीं दिखाए गए थे।

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान साक्ष्य के कई अंशों की ओर आकर्षित किया, जैसे कि जमुना की उंगली पर एक फोड़ा, अपीलकर्ता के दाहिने अग्रबाहु के निचले तीसरे हिस्से पर 1" से 1/3" लंबाई और आधा इंच से 3/4" चौड़ाई के संदिग्ध जलने के कई अनियमित क्षेत्र, जब 2-6-1965 को डॉ. जे नाथ द्वारा उनका परीक्षण किया गया था, एक साक्षी द्वारा यह कथन कि उसने कथित हत्या के समय घर से कुछ धुआँ निकलते देखा था, कई साक्षियों द्वारा उल्लिखित जलने से उसकी मृत्यु की अफवाह, जिसे 30-5-1965 को पुलिस को भेजी गई सूचना में स्थान मिला था, जो मृतक पत्नी के एक रिश्तेदार लल्लू प्रसाद, अ. सा. 28 द्वारा दी गई थी, और हवलदार गोरखनाथ सिंह, अ. सा. 3 द्वारा 28-5-1965 को पुलिस थाने में दी गई एक अन्य लिखित सूचना, और साक्षियों द्वारा गवाही दी गई सूचना और विश्वास के अन्य समान अंश।

जहाँ तक 30-5-1965 की सूचना (प्रदर्श 17) जिसे पुलिस द्वारा प्राथमिकी माना गया, या 28-5-1965 को गोरखनाथ सिंह द्वारा दी गई सूचना, जिसे अपीलकर्ता के अनुसार प्रथम सूचना प्रतिवेदन के रूप में माना जाना चाहिए, और साक्षियों द्वारा दी गई सूचना और विश्वास

के अन्य अंशों का संबंध है, यह स्पष्ट है कि ये अनुश्रुत साक्ष्य पर आधारित हैं जिन्हें सही रूप से अपवर्जित कर दिया गया था। विचारण न्यायालय ने इंगित किया कि अपीलकर्ता और उसके परिवार के अन्य सदस्य उनके द्वारा फैलाई गई इन झूठी अफवाहों के स्रोत थे ताकि खुद को हत्या के आरोप से बचा सकें। इसलिए, हम अभियोजन पक्ष या अपीलकर्ता द्वारा हमारे समक्ष प्रथम सूचना प्रतिवेदन के रूप में रखे गए किसी भी दस्तावेज को कोई महत्व नहीं देते हैं। इनमें अफवाह और अनुश्रुत साक्ष्य के अलावा कुछ नहीं है क्योंकि जो लोग अपराध किए जाने की सूचना दे सकते थे, वे वास्तव में अपराधी थे जो इसके किए जाने को छिपाने और जांच को गुमराह करने में रुचि रखते थे।

अपीलकर्ता के शरीर पर जलने के निशानों के संबंध में, विचारण न्यायालय ने सही रूप से इंगित किया कि डॉक्टर ने 2-6-1965 को कहा था कि वे 3 या 4 दिन पुराने थे। उन्हें आग बुझाने के किसी भी प्रयास से जुड़ा हुआ नहीं दिखाया गया जिससे श्रीमती चंदा देवी जल सकती थीं। ऐसे मामले में सबसे अच्छा साक्ष्य एक डॉक्टर का हो सकता था जिसे, जैसा कि उच्च न्यायालय ने इंगित किया, बुलाया जाना चाहिए था लेकिन घर में टेलीफोन होने के बावजूद नहीं बुलाया गया।

हमारा मानना है कि इस बचाव को साबित करने का भार कि श्रीमती चंदा देवी की मृत्यु अपीलकर्ता द्वारा आरोपित तरीके से हुई थी, अपीलकर्ता पर था। यह भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 103 और 106 के प्रावधानों से स्पष्ट है। विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने सही रूप से इंगित किया था कि अपीलकर्ता किसी भी ऐसे तथ्य या परिस्थिति का विश्वसनीय या पर्याप्त साक्ष्य देने में बुरी तरह विफल रहा है जो इस बचाव का समर्थन कर सके कि श्रीमती चंदा देवी की मृत्यु इसलिए हुई क्योंकि उनकी नायलॉन की साड़ी में मिट्टी के तेल के स्टोव से दुर्घटनावश आग लग गई थी। विचारण न्यायालय ने सही रूप से देखा था कि मात्र यह तथ्य कि कुछ साक्षियों ने कमरे से कुछ धुआँ निकलते देखा था, जिसके पास ही एक रसोई थी जहाँ भोजन पकाए जाने की संभावना थी, यह संकेत

नहीं दे सकता था कि श्रीमती चंदा देवी की साड़ी में आग लग गई थी। न तो मृतक महिला और न ही अपीलकर्ता और न ही उसके परिवार के किसी सदस्य को आग के विरुद्ध सहायता के लिए दौड़ते या पुकारते हुए दिखाया गया था।

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 का उपयोग अभियोजन पक्ष द्वारा सहायता के रूप में नहीं किया जा सकता क्योंकि वह धारा केवल तभी लागू होती है जब अपराध के वास्तविक किए जाने से संबंधित कोई तथ्य अभियुक्त के विशेष ज्ञान में हो, जैसे कि वे परिस्थितियाँ जिनमें या वह इरादा जिसके साथ अभियुक्त ने अपराध गठित करने वाला कोई विशेष कार्य किया हो। साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 की भाषा, हमारी राय में, उस पर इतना संकीर्ण अर्थ लगाने की अनुमति नहीं देती है। इस न्यायालय ने *गुरचरण सिंह बनाम पंजाब राज्य* में धारित किया कि अभियुक्त द्वारा विशेष रूप से लिए गए ऐसे बचाव को साबित करने का भार, जो उसे आपराधिक दायित्व से मुक्त कर सकता है, निश्चित रूप से उसी पर होता है। यह एक अलग बात है कि साक्ष्य की वह मात्रा जिसके द्वारा वह एक उचित विश्वास पैदा करने के अपने भार के निर्वहन में सफल हो सकता है, कि आपराधिक दायित्व से मुक्त करने वाली परिस्थिति मौजूद रही हो सकती है, अभियोजन पक्ष पर अभियुक्त के अपराध को उचित संदेह से परे स्थापित करने के भार से कम है।

साक्ष्य अधिनियम की धारा 103 या 106 का लागू होना, हालांकि, अभियोजन पक्ष को उचित संदेह से परे अभियोजन मामले को साबित करने के अपने सामान्य या प्राथमिक भार के निर्वहन के कर्तव्य से मुक्त नहीं कर सकता। केवल तभी जब अभियोजन पक्ष ने ऐसा साक्ष्य प्रस्तुत किया हो, जिस पर यदि विश्वास किया जाए, तो वह दोषसिद्धि का आधार बनेगा, या जो प्रथम दृष्टया मामला बनाता है, तभी उन तथ्यों पर विचार करने का प्रश्न उठता है जिनका सिद्ध करने का भार अभियुक्त पर हो सकता है। हमारे समक्ष मामले में

1 ए.आई.आर. 1956 एस.सी. 460.

महत्वपूर्ण प्रश्न यह है: क्या अभियोजन पक्ष ने अपीलकर्ता के अपराध को उचित संदेह से परे साबित करने के अपने प्रारंभिक या सामान्य और प्राथमिक भार का निर्वहन किया है?

शायद विचारण न्यायालय ने उन तथ्यों और परिस्थितियों पर अधिक तार्किक मार्ग अपनाया था जो संकेत देते थे कि अपीलकर्ता उन तीन व्यक्तियों में से एक था जिनके संयुक्त कार्यों के परिणामस्वरूप 28-5-1965 की सुबह श्रीमती चंदा देवी की मृत्यु हुई थी। यह हो सकता है कि अपीलकर्ता हत्या के वास्तविक किए जाने में प्राथमिक या मुख्य कर्ता था जब उसकी सौतेली माँ ने उससे सहायता मांगी थी जो उसे उसकी पत्नी को सबक सिखाने के लिए उसकी ओर से की गई एक अपील प्रतीत होती थी ताकि वह अब उसके द्वारा परेशान न की जा सके। लेकिन, इस निष्कर्ष का प्रभाव कि अपीलकर्ता उस कमरे में गया था जहाँ से मृतक महिला की उसे मारे जाने से बचाने की चीखें उसके तुरंत बाद आई थीं, जमुना प्रसाद और श्रीमती कलावती द्वारा उसके पीछे जाने के साक्ष्य से कम हो जाता है। उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को शायद इस तथ्य से कुछ समर्थन मिल सकता था कि जमुना प्रसाद को बाहर बच्चों को शांत करते और डांटते हुए देखा गया था जबकि अपीलकर्ता अपनी पत्नी के साथ इस तरह से व्यवहार कर रहा होगा जिससे उसकी मृत्यु हुई। लेकिन, यह सब अटकलबाजी का विषय है। छिपे हुए लेकिन उचित संदेह और आशंकाएं हमें अभियोजन मामले को कम से कम जमुना प्रसाद और श्रीमती कलावती के बरी होने के बाद घेरती और उस पर हमला करती प्रतीत होती हैं। जैसा कि अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने सही रूप से इंगित किया है, कलावती और जमुना प्रसाद को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के उपयोग द्वारा हत्या के लिए बरी किए जाने के बाद, अपीलकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत साधारण रूप से दोषी ठहराए जाने से पहले अभियोजन पक्ष द्वारा अपीलकर्ता का व्यक्तिगत दायित्व स्थापित किया जाना चाहिए न कि संयुक्त दायित्व। इसके अलावा कि अपीलकर्ता मृतक पत्नी का पति है, जिससे सामान्यतः यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह उसे सबक सिखाने की पहल करे, विशेष रूप से जब श्रीमती कलावती ने उसकी सहायता मांगी थी, और

एक सामान्य ससुर की ऐसे मामले में पहल करने या अग्रणी भूमिका निभाने की संभवतः स्वाभाविक अनिच्छा, जिनमें से दोनों केवल अटकलबाजी या उपधारणा के विषय हो सकते हैं, ऐसा कुछ भी नहीं है जो अपीलकर्ता के किसी विशेष या अलग कार्य के लिए दायित्व को निश्चित या निर्णायक रूप से तय कर सके जिसे उसकी पत्नी की मृत्यु का कारण कहा जा सके।

हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने इस प्रश्न पर काफी संतोषजनक ढंग से विचार नहीं किया था कि क्या हत्या के अपराध के संबंध में एक तरफ अपीलकर्ता और दूसरी तरफ उसके पिता जमुना प्रसाद और उसकी सौतेली माँ कलावती के मामले के बीच अंतर किया जा सकता था। फिर भी, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर इसके इस निष्कर्ष से सहमत हो सकते थे कि अपीलकर्ता अकेले अपनी पत्नी श्रीमती चंदा देवी की हत्या के लिए उत्तरदायी था और हम इसके तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं करते यदि मामले का एक और पहलू हमारे सामने नहीं होता। अब हम इस पहलू पर विचार करते हैं।

भले ही, जैसा कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने सही रूप से माना था, पाँच साक्षियों गणेश प्रसाद, अ. सा. 1, नंद किशोर, अ. सा. 2, राधे श्याम शर्मा, अ. सा. 9, लक्ष्मी नारायण, अ. सा. 16, और बसदेव प्रसाद, अ. सा. 27 का स्वीकार्य और विश्वसनीय साक्ष्य है, जिनके बारे में कहा जाता है कि उन्होंने बरामदे में जो कुछ हो रहा था उसे अलग-अलग दूरियों से बाहर से सुना या देखा था, कोई चश्मदीद साक्षी पेश नहीं किया गया जो यह साबित कर सके कि वास्तव में उस कमरे के अंदर क्या हुआ जहाँ हत्या की गई थी। कमरे के अंदर क्या हुआ होगा, इसका एकमात्र साक्ष्य "बचाओ बचाओ" की चीख थी, हालांकि साक्षियों के विवरणों के बीच इस बारे में कुछ समझने योग्य भिन्नता है कि क्या मृतक महिला ने कुछ और शब्द भी कहे थे जो यह दिखाते थे कि वह वास्तव में मारी जा रही थी। हम इस दृष्टिकोण से भी सहमत हैं कि उस समय बच्चों ने जो कहा या किया, उसके बारे में साक्षियों का साक्ष्य साक्ष्य अधिनियम की धारा 6 के तहत स्वीकार्य है। मामले में कुछ साक्ष्य

को देखते हुए कि अपीलकर्ता के बच्चों ने अपीलकर्ता या उसके पिता या उसकी सौतेली माँ के विरुद्ध किसी भी तथ्य को प्रकट करने से परहेज किया था जब उनसे रिश्तेदारों या पुलिस द्वारा पूछताछ की गई थी, यह तर्क दिया जा सकता था कि बच्चों को पेश करने का कोई मतलब नहीं था। न्यायालय ऐसी परिस्थितियों में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 540 के तहत उनका परीक्षण न करने का सही निर्णय भी ले सकता था। लेकिन, यह दिखाने का प्रयास तक नहीं किया गया कि नौकरानी, गीता कुरमीनी, जो अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार घटना के समय बरामदे में थी, को विचारण में क्यों पेश नहीं किया गया, जबकि उसका कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत दर्ज किया गया था और उसे अभिलेख पर लाया गया था (प्रदर्श 12)। यह कथन केवल गीता कुरमीनी की पुष्टि करने या उसका खंडन करने के लिए साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जा सकता था यदि वह विचारण में साक्षी के रूप में उपस्थित होती। इसलिए, अपीलकर्ता काफी उचित रूप से न्यायालय से साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 दृष्टांत (जी) के तहत वैकल्पिक उपधारणा का लाभ देने और यह अनिचली लगाने के लिए कह सकता था कि, यदि उसे पेश किया गया होता, तो उसने अपीलकर्ता के विरुद्ध अभियोजन मामले को नुकसान पहुँचाया होता। उसका कथन, यदि वह मामले में साक्ष्य के रूप में होता, तो बहुत अच्छी तरह से यह दिखा सकता था कि वह जमुना था जो श्रीमती चंदा देवी की मृत्यु कारित करने में अग्रणी भूमिका निभा रहा था। मामले में इस बारे में कुछ साक्ष्य है कि जमुना किस तरह का आदमी था। यह दिखाता है कि वह स्वाभाविक रूप से दयालु या सौम्य या मिलनसार व्यक्ति नहीं था जिसे लोग पसंद करते हों। अपनी बहू के संबंध में एक ससुर के सामान्य अवरोध, जिन पर राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने इतना जोर दिया, वास्तव में इस मामले में बिल्कुल नहीं हो सकते हैं। वास्तव में, हम सोचते हैं कि, मामले की परिस्थितियों में, नौकरानी गीता कुरमीनी, अभियोजन पक्ष के मामले को उजागर करने के लिए एक आवश्यक साक्षी थी। उसका साक्ष्य अभियोजन पक्ष द्वारा नहीं रोका जा सकता था चाहे उसका मामले पर जो भी प्रभाव पड़े। हम सोचते हैं कि

प्रिवी काउंसिल द्वारा *स्टीफन स्नेविरत्रे बनाम द किंग*² में ऐसे साक्षी के संबंध में निर्धारित सिद्धांत यहाँ लागू होता है। वहाँ (पृष्ठ 300 पर) यह देखा गया था:

"माननीय न्यायाधीशगण इस तरह के मामले में विवेक को सीमित करने के लिए कोई नियम निर्धारित नहीं करना चाहते हैं जो प्रत्येक मामले की विशेष परिस्थितियों पर इतना निर्भर है। वे अभियोजन चलाने वालों की ओर से अत्यधिक स्पष्टवादिता और निष्पक्षता को हतोत्साहित करने की भी इच्छा नहीं रखते हैं; लेकिन, साथ ही वे, सामान्य रूप से बोलते हुए, इस विचार को स्वीकार नहीं कर सकते कि एक अभियोजन पक्ष को संख्या और विश्वसनीयता के विचारों के बावजूद साक्षियों को बुलाना चाहिए, या कि एक अभियोजन पक्ष को अभियोजन और बचाव दोनों के कार्यों का निर्वहन करना चाहिए। यदि वह ऐसा करता है, तो भ्रम की स्थिति उत्पन्न होना बहुत स्वाभाविक है और यह तब और अधिक होने की संभावना है जब अभियोजन साक्षियों को बुलाता है और फिर लगभग स्वचालित रूप से प्रति-परीक्षण द्वारा उन्हें बदनाम करने के लिए आगे बढ़ता है। उस वृत्तांत को उजागर करने के लिए आवश्यक साक्षी जिस पर अभियोजन आधारित है, निश्चित रूप से अभियोजन द्वारा बुलाए जाने चाहिए, चाहे परिणाम में उनकी गवाही का प्रभाव अभियोजन के मामले के पक्ष में हो या विरुद्ध।"

अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित श्री मुल्ला ने हमारा ध्यान *के. जी. पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य*³ की ओर भी आकर्षित किया है। इस न्यायालय ने वहाँ धारित किया कि, जब तीन अभियुक्तों में से दो को, जिनमें से प्रत्येक पर धारा 302 सहपठित धारा 34 भारतीय दंड संहिता के तहत आरोप लगाया गया था, बरी कर दिया गया था, तो यह माना जाना चाहिए कि दो बरी किए गए व्यक्तियों ने अपराध के किए जाने में बिल्कुल भी भाग नहीं लिया। यह

2 एआईआर 1936 पी.सी. 289 @ 300.

3 [1964] (आई) एससीआर 678.

तर्क दिया जाता है कि इस दृष्टिकोण का स्वाभाविक परिणाम यह है कि व्यक्तिगत अभियुक्त का वह विशेष कार्य जिससे मृतक की मृत्यु हुई, उसे अकेले और अलग से धारा 302 भारतीय दंड संहिता के तहत साधारण रूप से दोषी ठहराए जाने से पहले बिना किसी संदेह के स्थापित किया जाना चाहिए।

हमारा ध्यान *सोहन लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*⁴ की ओर भी आकर्षित किया गया जहाँ इस न्यायालय द्वारा यह धारित किया गया था कि यह दिखाने के लिए साक्ष्य के अभाव में कि अभियुक्त के किस कृत्य से मृतक की मृत्यु हुई, अभियुक्त को न तो धारा 302 भारतीय दंड संहिता के तहत साधारण रूप से और न ही धारा 302 सहपठित धारा 34 भारतीय दंड संहिता के तहत दोषी ठहराना उचित होगा, जब उच्च न्यायालय ने धारा 302 सहपठित धारा 34 भारतीय दंड संहिता के तहत आरोपों से सह-अभियुक्तों को बरी कर दिया था, और राज्य ने दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील नहीं की थी।

हमारे समक्ष मामले में, उच्च न्यायालय ने वास्तव में अपीलकर्ता की दोषसिद्धि को धारा 302/34 भा.द.सं. से बदलकर धारा 302 भा.द.सं. कर दिया था, जिससे यह संकेत मिलता है कि वह धारा 302/34 भा.द.सं. के तहत किसी भी अपराध का दोषी नहीं था। यह सच है कि इस न्यायालय ने *यशवंत एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य*⁵ में स्पष्ट किया था कि किसी मामले में धारा 34 भा.द.सं. की प्रयोज्यता मामले के विशेष तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करती है। इसलिए, हमें अपने समक्ष मामले के विशेष तथ्यों की जांच करनी होगी और उन पर निर्णय देना होगा।

हम सोचते हैं कि, इस मामले के तथ्यों के आधार पर, इस बारे में उचित संदेह हो सकता है कि क्या किसी भी तीन अभियुक्त व्यक्तियों को हत्या का दोषी ठहराने के लिए धारा 34 भा.द.सं. लागू की जा सकती है। मामले में धारा 34 भा.द.सं. के लागू होने को अपवर्जित करने के बाद, साक्ष्य हमें यह भी निर्णायक रूप से साबित करता हुआ प्रतीत नहीं होता कि

4 [1971] (I) एस. सी. सी. 491.

5 [1973] 1 एससीआर 291.

अपीलकर्ता ने ही मृतक का गला घोंटा होगा या कोई अन्य कार्य किया होगा, जो उसके पिता और सौतेली माँ के कृत्यों से बिल्कुल अलग हो, जिससे मृत्यु हुई। यह परिणाम साक्ष्य की समग्रता और गीता कुरमीनी को पेश न करने की उपधारणा से निकलता है जो उस साक्ष्य के मूल्य को नष्ट कर देता है जिसे उच्च न्यायालय ने इतना महत्व दिया था, कि अपीलकर्ता मृतक महिला को उस समय उसके कमरे के अंदर धक्का देने या ले जाने जैसा कुछ कर रहा था जब उसे आखिरी बार जीवित देखा गया था।

विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने मृतक के शरीर से कुछ रक्तस्राव के साक्ष्य पर भरोसा करते हुए, जिसे अपीलकर्ता ने कार में श्मशान घाट तक ले जाना स्वीकार किया था, और जलने से हुई मृत्यु के साक्ष्य के अभाव में, इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि अपीलकर्ता ने मृतक का गला घोंटा होगा। दुर्घटना से जलने के बचाव के मामले को समाप्त करने के बाद यह शुद्ध अटकलबाजी थी। यदि यह केवल गला घोंटने का मामला होता, तो मृतक महिला की सहायता के लिए चीखें समझाना मुश्किल होता जो सड़क पर साक्षियों द्वारा सुनी गई थीं, जब तक कि हम यह न मान लें कि मृतक महिला चिल्लाई, जैसा कि उसने किया होगा, इससे पहले कि गला घोंटने वाले हाथ उसके गले पर रखे गए थे। इसलिए, यद्यपि हम यह मान सकते हैं, जैसा कि हम मानते हैं, कि यह हत्या का मामला होना चाहिए, हमारे लिए यह निर्णायक रूप से पता लगाना संभव नहीं है कि यह केवल गला घोंटने का मामला था और कुछ नहीं या वह व्यक्ति जिसने गला घोंटा होगा या कोई अन्य कार्य किया होगा जिससे वास्तव में मृतक की मृत्यु हुई, वह अपीलकर्ता था न कि उसके पिता या सौतेली माँ।

जहाँ तक अपीलकर्ता द्वारा शव के त्वरित निस्तारण के मामले का संबंध है, परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर सही रूप से विश्वास किया गया और दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा इसे निर्णायक माना गया। यह साक्ष्य इस संदेह को स्वीकार करने के लिए बहुत ही हानिकारक था कि अपीलकर्ता ने अपनी पत्नी की हत्या के बाद उसके शव के अवशेषों को ठिकाने लगाने में अग्रणी भूमिका निभाई थी। विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने,

अपीलकर्ता की धारा 201 भारतीय दंड संहिता के तहत दोषसिद्धि को बरकरार रखते हुए, उसकी सजा तय नहीं की थी। श्री मुल्ला ने हमारे समक्ष यह तर्क दिया कि अपीलकर्ता को तीन वर्ष से अधिक का सश्रम कारावास नहीं दिया जाना चाहिए, जैसे कि उसके पिता जमुना को धारा 201 भारतीय दंड संहिता के तहत केवल तीन वर्ष के सश्रम कारावास की सजा सुनाई गई थी। यहाँ यह उल्लेख किया जा सकता है कि, जबकि उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपीलकर्ता को अपील करने की विशेष अनुमति दी गई थी, इस न्यायालय ने उसके पिता जमुना को धारा 201 भारतीय दंड संहिता के तहत उसकी दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील करने की कोई अनुमति देने से इनकार कर दिया था। हम, हालांकि, सोचते हैं कि अपीलकर्ता और उसके पिता के मामले के बीच अंतर मुख्य रूप से दो आधारों पर न्यायसंगत है; प्रथम, पति के रूप में अपीलकर्ता का यह कर्तव्य था कि उसने अपनी पत्नी की रक्षा के लिए कुछ किया होता, भले ही हम तर्क के लिए यह मान लें कि वास्तविक मृत्यु दूसरों के कृत्यों द्वारा हुई हो सकती है; और द्वितीय, अपीलकर्ता ने मृतक महिला के निस्तारण में अग्रणी भूमिका निभाई थी। हम सोचते हैं कि धारा 201 भारतीय दंड संहिता के तहत जो अधिकतम सजा दी जा सकती है, वह इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर अपीलकर्ता के लिए उपयुक्त है। तदनुसार, हम इस अपील को इस हद तक स्वीकार करते हैं कि हम धारा 302 भा.द.सं. के तहत अपीलकर्ता की दोषसिद्धि को रद्द करते हैं, लेकिन हम धारा 201 भा.द.सं. के तहत उसकी दोषसिद्धि को बरकरार रखते हैं और उसे सात वर्ष के सश्रम कारावास और 1,000/- रुपये का जुर्माना देने की सजा सुनाते हैं और जुर्माने के भुगतान में चूक होने पर छह महीने की अतिरिक्त सश्रम कारावास की सजा सुनाते हैं।

वी.पी.एस.

अपील स्वीकृत।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक,

कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनिचलीय होगा।